अण्डे देती है, जिनसे 8 से 13 दिनों में छोटी इल्लियां बाहर आती हैं और 4 से 5 दिनों तक समूह में रहकर पत्तियों को खुरचकर खाना शुरू करती है तथा जाली नुमा संरचना बना देतीं है । इनका रंग गहरा हरा होने के साथ–साथ शरीर पर काले रंग की त्रिभुजाकार सरंचना भी होती है। ये पौधों की पत्तियों, फूलों व नये शीर्ष भाग को खाकर नष्ट करती है। पत्तियों पर उपस्थित छेद से इनकी उपस्थिति का पता लगाया जा सकता हैं। इसके नियंत्रण के लिए संक्रमित पौधों के हिस्सों और युवा लार्वा को इकट्ठा करके नष्ट कर दें एवं साथ ही साथ खरपतवार को भी नष्ट कर दें। वयस्क कीड़ों को पकड़ने के लिए एक लाइट ट्रैप (यानी, 200 वाट पारा वाष्प लैंप) स्थापित करें। इमामेक्टिन बेंजोएट 5 एस जीध्0.5 ग्राम/लीटर या इंडोक्साकार्ब 14.5 एस सी/0.25 मिली/लीटर या फिप्रोनिल 5 एस. एल./0.2 मिली/लीटर या फ्लुबेंडाऐमाइड 480 एस सी/0. 5 मिली/लीटर या क्लोरपाइरीफॉस 20 ईसी/0.2 मिली/लीटर की दर से छिड़काव करें और आवशयकतानुसार दोहराएं।

- **सफेद मक्खी:** यह कीट आकार में बहुत छोटे होते हैं तथा इनका रंग सफेद धुँए जैसा होता है। मादाएं पत्तियों के नीचे अलग–अलग व लगभग 119 हल्के पीले रंग के अंडे देती हैं जोकि बाद में भूरे रंग के हो जाते हैं। यह बहुत ही आक्रामक प्रकृति के होते है और एक छोटी सी आहट से ही एक से दूसरे पौधों तक पहुंच जाते हैं। यह पौधों की पत्तियों में नीचे की ओर चिपक जाती हिन् तथा रस चूस कर पत्तियों को रंगहीन या पीला कर देते हैं जिससे पौधों में भोजन बनाने की क्षमता कम तथा उत्पादन भी कम हो जाती है। ये मखियाँ उरद में पीत चितेरी रोग के लिए वाहक का कार्य भी करते है।

- **फली भेदक :** इन फसलों में दो प्रकार के फली भेदकों का आक्रमण होता है– हेलिकोवर्पा आर्मिजेरा व मारुका टेस्टूलालिस। दोनों कीटों की इल्लियां फलियों में बन रहे दानो को खाकर नष्ट करती है। फसल की वनस्पतिक अवस्था पर इनका प्रभाव होने से प्रभावित पौधा पत्तियों रहित हो सकता है। हेलिकोवर्पा आर्मिजेरा की इल्लियां फलियों में अपना सिर डालकर दानो को खाती है जबकि मारुका टेस्टूलालिस की इल्लियां फलियों में अन्दर भी रहकर वृद्धि कर रहे दानों को खाकर नष्ट करती है। इन कीटों की इल्लियां पौधों के सभी भागो को खाकर नष्ट कर सकती है। परन्तु ये पौधे के कोमल भागों को ज्यादा पसंद करती है। इनके नियंत्रण के लिए फेन्थोएट 50% ई.सी. 2.00 लीटर अथवा क्यूनालफास 25% ई. सी. 1.25 लीटर प्रति हे. की दर से 600–800 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

- **माहू (एफिड):** यदि बादल की उपस्थिति कुछ समय के लिय स्थिर रहती है तो यह कीट अपनी जनसंख्या को अत्यधिक तेजी से बढ़ाते हैं और फसलों को अत्यधिक क्षति पहुचाते हैं। इनके प्रौढ़ चमकीले काले रंग के होते हैं। इनके निम्फ और प्रोढ़, पौधों के कोमल भागों से रस चूसते रहते हैं। प्रभावित पौधों की पत्तियाँ ऐंठ जाती हैं। यह अपने शरीर से एक मीठा पदार्थ निकलते रहते हैं तथा बाद में इस पदार्थ के ऊपर तना सड़न पैदा करने वाले कवक का विकास होने के कारण पौधों की उत्पादन क्षमता कम हो जाती है। यह विषाणु जनित रोगों के वाहक का भी कार्य करती है। इसके नियंत्रण के लिए समय से बुवाई करें तथा इसकी उपस्थिति का पता लगते ही खाली टिन के 10 डब्बों को पीला रंग से पोत कर उनके ऊपर एक परत पारदर्शी ग्रीस लगाये और लम्बे लकड़ी के डंडे पर लगाकर 25 मीटर की दूरी पर इन सभी डब्बों को एक हेक्टेयर क्षेत्र में लगा दें। एसीटामिप्रिड 20 एस.पी. की 50 ग्राम 600 लीटर पानी में मिलाकर या इमिडाक्लोपिड 17.8 एस.एल. 0.2 मिली. प्रति लीटर पानी के साथ मिलाकर प्रति हे. की दर से छिड़काव करें।

- **तैला कीट (थ्रिप्स):** ये आकार में छोटे और पत्तियों के नीचे की सतह पर रह कर रस चूसते रहते हैं। प्रभावित पौधों की पत्तियों पर चमकीले रंग के धब्बे नजर आते हैं तथा इसके द्वारा सबसे अधिक नुकसान फूल बनने की अवस्था पर होता है, जिसके कारण प्रभावित पौधे फूलरहित हो जाते हैं और जिसका सीधा प्रभाव फसल उत्पादन पर पड़ता है। मिथाइल–ओ–डिमेटान 25% ई.सी 1 लीटर या डायमिथोएट 30% ई.सी. 1 लीटर प्रति हे. की दर से 600–800 ली. पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

- **हरे फुदके:** इस कीट के प्रौढ़ एवं शिशु दोनो पत्तियों से रस चूस कर उपज पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। इसका नियन्त्रण थ्रिप्स के लिए बताये गये कीटनाशियों के प्रयोग से किया जा सकता है।

प्रमुख बिन्दु

- उरद की बुवाई 15 फरवरी से 15 मार्च तक।
- सुपर फास्फेट का प्रयोग बेसल ड्रेसिंग में अधिक लाभदायक रहता है।
- पहली सिंचाई बुवाई के 25–30 दिन बाद करें।
- बीजोपचार राइजोबियम कल्चर एवं पी.एस.वी. से अवश्य करें।
- यदि आलू के बाद उरद की फसल ली जाती है तो नत्रजन के प्रयोग की आवश्यकता नहीं है।
- थ्रिप्स के लिये निगरनी रखें। प्रथम सिंचाई के पहले नियंत्रण हेतु सुरक्षात्मक छिड़काव करें।

कटाई एवं भंडारण

जब फलियां जो काली हो जाये, तब इसकी कटाई कर लेनी चाहिए। उर्द की फलियां एक साथ ही पक जाती हैं तथा चिटकती नहीं। अतः फसल की कटाई एक साथ ही की जा सकती है। भण्डारण मूंग की भांति ही करें तथा इसके साथ नीम की पत्तियों का भी प्रयोग किया जा सकता हैं। हरी खाद हेतु यदि फसल पलटना हो तो अंतिम तुडाई के बाद फलियों को खेत में चटकाने दें तथा मानसून की वर्षा के बाद अच्छा जमाव होने के पश्चात इसे हरी खाद हेतु सड़ने के लिए पलट दें। उरद का भंडारण करने से पूर्व इसे अच्छी तरह से साफ कर सुखा लेना चाहिए तथा इसमें 10 प्रतिशत से अधिक नमी नहीं होनी चाहिए।

उपज

उचित प्रबंधन तकनीक के अपनाने पर 8 से 11 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता सकता हैं।

विशेष जानकारी हेतु सम्पर्क करें:
डॉ. एस.एस. सिंह
निदेशक प्रसार शिक्षा
प्रसार शिक्षा निदेशालय
दूरभाष : +91–789746699
ई–मेल : directorextension.rlbcau@gmail.com

प्रकाशित:
कुलपति
रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय
झाँसी 284003, उत्तर प्रदेश (भारत)

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381

प्र.शि.नि./त.प्र.सा.-फोल्डर/2023/67

बुन्देलखण्ड में उरद की वैज्ञानिक खेती

मीनाक्षी आर्य, अंशुमान सिंह, अर्पित सूर्यवंशी,
अखौरी निशात भानु, संजीव कुमार,
सुन्दर पाल एवं सुशील कुमार चतुर्वेदी

प्रसार शिक्षा निदेशालय
रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय
झाँसी 284003, उत्तर प्रदेश (भारत)
वेबसाईट : www.rlbcau.ac.in

बुंदेलखंड में उर्द की वैज्ञानिक खेती

उर्द पूरे भारत में बोयी जाने वाली महत्वपूर्ण दलहनी फसलों में से एक हैं। यह मुख्य रूप से दाल के रूप में उपयोग की जाने वाली फसल है। उरद की दाल से विभिन्न व्यंजन जैसे कि कचोरी, पापड़, हलवा, इमरती, पूरी, इडली, डोसा, आदि भी तैयार किये जाते हैं साथ ही साथ इसका उपयोग गहरी खाद के रूप में भी किया जाता है। वायुमण्डल से नाइट्रोजन का स्थिरीकरण प्रक्रिया से भूमि की उर्वरा शक्ति मे भी वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त पत्तियाँ एवं जड़ों के कारण भूमि मे कार्बनिक पदार्थ की मात्रा भी बढ़ती है। यह एक गहरी जड़ वाली फसल होने के कारण मिट्टी के कणों को आपस में बांधती है, जो मृदा अपरदन रोकने में सहायक होती है। दुधारू पशुओं के लिए पौष्टिक चारे के रूप में यह अत्यंत उपयोगी है। सभी दालों की अपेक्षा उरद में फास्फोरिक ऐसिड के सबसे अधिक मात्रा (औसतन 10 गुना) होती हैं।

जलवायु

उर्द गर्म तथा आर्द्र दोनों ही जलवायु की फसल है। यह मुख्य रूप से ठंडी, गर्मी तथा बरसात में उगायी जाती है। इसमें फूल आने के समय भारी वर्षा इसके उत्पादन में विपरीत प्रभाव डालती है। उरद की फसल की अधिकतर प्रजातियाँ प्रकाशकाल के लिये संवेदी होती है। वृद्धि के लिये 25–30 डिग्री सेंटीग्रेट तापमान उपयुक्त होता है।

भूमि की तैयारी

हल्की रेतीली, दोमट या मध्यम प्रकार की भूमि जिसमे पानी का निकास अच्छा हो उरद के लिये अधिक उपयुक्त होती है। पी.एच. मान 7–8 के बीच वाली भूमि उरद के लिये उपजाऊ होती है। अम्लीय व क्षारीय भूमि उपयुक्त नही है। खेत को पहले मिट्टी पलटने वाले हल से तथा इसके बाद हैरो से दो–तीन बार जुताई कर इसके ऊपर पाटा चलाते है। खेत को पूरी तरह समतल तथा खरपतवार मुक्त होना चाहिए ताकि जल प्रबंधन अच्छे से किया जा सके। खेतों में अच्छे अंकुरण के लिए बोने से पहले बीज को अंकुरित कर लेना चाहिए।

बुआई का समय

खरीफ में उर्द की बुआई जून के दूसरे पखवाड़े या जुलाई के प्रथम पखवाड़े में होनी चाहिए। रबी के मौसम में फरवरी के तीसरे सप्ताह से अप्रैल के प्रथम सप्ताह तक होना चाहिए।

बीज उपचार दर तथा पौधों के बीच की दूरी :

खरीफ के मौसम में 12–15 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर बीज पर्याप्त रहता है। इस समय वानस्पतिक वृद्धि ज्यादा होने के कारण कतारों की दूरी 30 सें.मी. तथा पौधों से पौधों की दूरी 10 सें.मी. तथा बीजों को 4 से 5 सें.मी. की गहराई पर बुआई करे।

बीज उपचार

बुआई के पूर्व बीजों को 3 ग्राम थायरम या 2.5 ग्राम डायथेन एम 45 प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करे। जैविक बीज उपचार के लिए 5 से 6 ग्राम ट्राइकोडरमा फफूंदनाशक द्वारा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करे ।

खाद एवं उर्वरक

इस फसल को कम नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। सामान्य अनुसंशा के अनुसार उरद को 15 से 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 50 से 60 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 30 से 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हे. की आवश्यकता होती है। फास्फोरस तथा पोटाश बुआई करते समय बीज के नीचे 4 से 5 से.मी. गहराई पर रखना चाहिए।

जल प्रबंधन

खरीफ उरद की फसलों में ज्यादा सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। आमतौर पर इस फसल को दो से तीन सिचाई की आवश्यकता पड़ती हैं। पहली सिंचाई बुआई के 25 से 30 दिन बाद तथा उसके बाद 10 से 15 दिनों के अंतराल पर आवश्यकतानुसार सिंचाई किया जाना चाहिए। पहली सिंचाई बहुत जल्दी करने से जड़ों तथा ग्रन्थियों का विकास ठीक प्रकार नहीं होता है। फूल आने से पहले तथा दाना निकलने समय सिंचाई अत्यंत आवश्यक है। सिंचाई क्यारी बनाकर करना चाहिए तथा जहां स्प्रिंकलर की व्यस्था हो वहां इसका उपयोग किया जाना चाहिए। वर्षा के अभाव में फलियां बनते समय एक सिंचाई अवश्य की जानी चाहिए। स्प्रिकलर से सिंचाई अत्यधिक लाभप्रद रहता है। क्रांतिक फूल एवं दाना भरने के समय खेत मे नमी न हो तो एक सिंचाई देना चाहिये।

उरद की उन्नत किस्में

किसी भी फसल की उन्नत किस्मों का चयन कर बेहतर उपज प्राप्त की जा सकती है, इसी क्रम में बुंदेलखंड क्षेत्र के लिए उड़द की कुछ उन्नत किस्में तालिका 1 में वर्णित है जिसे उपयोग कर एक बेहतर उपज ली जा सकती है ।

तालिका 1. बुंदेलखंड क्षेत्र के लिए उड़द की उन्नत किस्में

किस्में	वर्ष	अवधि (दिन)	उपज (कुं/हे.)	मुख्य विशेषताएँ
वल्लभ उर्द–1	2014	70–75	10–11	विषाणु रोग रोधी
आईपीयू 11–02	2018	70–80	8–10	पीला चित्त्वर्ण रोग के लिए प्रतिरोधी
आईपीयू 13–1	2019	70–80	9–10	पीला चित्त्वर्ण रोग के लिए प्रतिरोधी
आईपीयू 10–26	2019	70–80	8–10	पीला चित्त्वर्ण रोग के लिए प्रतिरोधी
आईपीयू 17–1	2021	73–74	10–11	रोग रोधी

खरपतवार नियंत्रण

खरपतवार फसलों को अनुमान से कहीं अधिक क्षति पहुंचाती हैं। खर–पतवार नियंत्रित करने के लिए बुवाई के तुरंत बाद तथा जमाव के पहले पेंडिमिथिलीन 30 ई. सी. 1.32 ली. प्रति एकड़ अथवा एलाक्लोर 50 ई. सी. 1.2 ली. प्रति एकड़ छिड़काव करने से खरपतवार नियंत्रित हो जाता है।

प्रमुख रोग एवं प्रबंधन विषाणु जनित रोग

पीला मोजेक (पीला चित्त्वर्ण) रोगः यह रोग मूंगबीन येलो मोजेक विषाणु के कारण होता हैं तथा सफेद मक्खी इसके वाहक के रूप में इस रोग को रोगी पौधे से दूसरे स्वस्थ्य पौधे तक पहुँचता है। यह विषाणु एक मौसम से दूसरे मौसम तक जीवित रहकर एक फसल से दूसरी फसल में फैलता रहता है। इससे उपज में 10 से 100 प्रतिशत तक की हानि हो सकती है। शुरुआत में नई पत्तियों पर पीले रंग के चित्तीदार छोटे–छोटे धब्बे बनते है जो बाद में एक साथ मिलकर तेजी से फैल कर बड़े–बड़े धब्बो में बदल जाते हैं। अंततः पत्तियाँ पूर्ण रुप से पीली पड़ जाती हैं। पौधे देर से परिपक्व होते हैं तथा फूल व फलियां भी स्वस्थ्य पौधों की अपेक्षा बहुत ही कम लगती हैं । फलियां कम तथा आकार में छोटी तथा उनका रंग भी पीला दिखाई पड़ता हैं ।

पत्ती शिकन/पत्ती ऐंठन/झुर्रीदार पत्ती रोगः यह विषाणु जनित रोग माहू और सफेद मक्खी द्वार फैलता है। पौधा अपनी प्रारम्भिक अवस्था में संक्रमित हो तो शत प्रतिशत हानि भी हो सकती है। इस रोग के लक्षण में बुआई के पांच सप्ताह बाद नई कलियों में सड़न पैदा हो जाती है। फलस्वरूप पौधे प्रारंभिक अवस्था में ही मरने लगते है तथा परिपक्व पौधों में रोगी पौधे की पत्तियां कुंडलाकार नीचे की और मुड़ जाती है। ये पत्तियां छूने पर सामान्य पत्ती से अधिक मोटी एवं खुरदरी प्रतीत होती हैं। पत्तियों की शिराएं हरे रंग से लालिमायुक्त भूरे रंग में परिवर्तित हो जाती है तथा बाद में ये रंग पत्तियों के डंठल तक पहुँच जाता है । इस रोग का फैलाव संक्रमित बीजतथा रोगी पौधे की पत्तियों के स्वस्थ पौधों के साथ रगड़ने से भी उनको संक्रमित करती है।

विषाणु जनित रोगों का नियंत्रणः

- रोग सहनशील तथा प्रतिरोधी किस्मों का चयन।
- रोगी पौधों को उखाड़ कर जला दें या गहरी मिट्टी में दबा दें।
- रोग वाहक कीटों के नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोरपिड 17.8 एस.एल. की 3–5 मि.ली. प्रति किलो बीज के दर से बीजोपचार करें।
- बुवाई के समय मृदा में फोरेट 10 सी जी / 1 कि.ग्रा. ए.आई. प्रति हेक्टेयर का प्रयोग करें जो सफेद मक्खी एवं माहू के प्रकोप को कम करता है।
- डाईमेथिएट 30 ई.सी. की 1.7 मि.ली. या थियामेथोक्सम 25 डब्ल्यू. जी. को 0.30 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर 14 दिनों के अंतराल में दो से तीन बार छिडकाव करें।

कवक जनित रोग :

- **सरकोस्पोरा पत्ती धब्बा रोगः** वातावरण में अधिक नमी होने की दशा में इसका संचारण होता है। यह कवक पौधों के अवशेषों व मृदा में रहते है। वातावरण में अधिक आद्रता होने की स्थिति में पौधों के तनो और फलियों पर हल्के धूसर रंग के असामान्य आकार के धब्बे दिखाई देते हैं, जिनका बाहरी किनारा गहरे से भूरे लाल रंग का होता है। अनुकूल परिस्थितिओं में यह धब्बे बड़े आकर के तथा अंत में रोग ग्रसित पत्तियाँ गिर जाती हैं। फूल बनाने की अवस्था में अनुकूल वातावरण मिलने पर यह रोग तेजी फैलता है, जिससे पत्तियों, फूलों और अल्प विकसित फलियों के गिरने से फसल उत्पादन में 60 प्रतिशत तक का नुकसान हो सकता है।
- **एन्थ्रक्नोज रोगः** यह रोग एन्थ्रक्नोज कवक से होता है। यह रोग मूलतः बीज जनित हैं तथा फसल अवशेषों पर पाए जाते हैं। जब वातावरण का तापमान कम और आद्रता अधिक होती है, तब बीज अंकुरण से लेकर फली बनने की अवस्था तक यह रोग हो सकता है। इसके बीजाणु हवा द्वारा रोगी पौधे से स्वस्थ पौधे तक फैलता हैं। यह रोग बीज–पत्र तथा तना, पत्ती एवं फलियों पर होता है। संक्रमित भाग पर अनियमित आकार के भूरे धब्बे लालिमा लिए हुए दिखाई देते हैं जो बाद में गहरे रंग के हो जाते हैं। बड़े होकर ये धब्बे पत्ती और फलियों को सुखा देते हैं, जिससे फसलों में क्षति बढ़ जाती है।

कवक जनित रोगों का नियंत्रणः

- पुरानी फसल एवं रोगग्रस्त फसल के अवशेषों को खेत से हटा दें।
- स्वस्थ बीज तथा अवरोधी किस्मों का उपयोग करें।
- बीजों को बोने से पूर्व फफूंदनाशी जैसे– कार्बेन्डाजिम (2.0 ग्राम), केप्टान अथवा थीरम (2.5 ग्राम), बाविस्टिन (1.5 ग्राम) प्रति किलो बीज दर से बीजोपचार करे ।
- पर्णीय छिडकाव के लिए फफूंदनाशी जैसे मैंकोजेब (2.0 ग्राम) प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 15 दिन के अन्तराल से दो बार छिडकाव करें।

मुख्य कीट एवं उनका प्रबंधन

- **तम्बाकू की इल्ली (कैटरपिलर) :** मादा शलभ रात्रि में, पत्तियों के नीचे समूह में